डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

व्यंग्य

पुराना पेंटर और नई कलम

श्रीलाल शुक्ल

प्रोफेसर पन्नालाल निशात थिएट्रिकल कंपनी के प्रसिद्ध चित्रकार रह चुके हैं। उनके रंगे हुए पर्दों की रंगीनी देखने के लिए किसी जमाने में लोग बंबई से कलकत्ता जाते थे और यदि कंपनी बंबई में हुई तो कलकत्ता से बंबई आते थे। पर्दों पर बनी हुई तस्वीरों के क्या कहने! कहीं काले पहाड़ बने हुए हैं, लाल सूरज निकल रहा है, हरे जंगल के ऊपर सफेद भूरे बादल हैं और वहीं पहाड़ की तलहटी में नदी बह रही है, सफेद घाट बना है, रंग-बिरंगी औरतें नहा रही हैं, पानी नीला है (क्या मजाल कि उसमें भी बादलों की रंगीनी का अक्स पड़ जाए)। वहीं मटमैली सड़क बनी हुई है जिस पर दो जेंटिलमैन, यानी कोट, पतलून, लंबी मूँछ, छड़ीधारी दो जवान आदमी टहल रहे हैं, क्योंकि जैसा बताया गया है, सवेरे का सुहावना समय है, या जैसा आप समझ ही सकते हैं, पास ही औरतें नहा रहीं हैं।

पर अब उन पर्दों का जमाना गया। उन नाटकों की जगह सिनेमा ने ले ली और उन नाटक-कंपनियों के स्थान पर स्कूल कॉलेजों की टीमें आ गईं जो गरीबी के मारे पर्दों का काम अभिनय के सहारे चलाती हैं। इसलिए प्रोफेसर साहब अब रिटायर हो कर अपने घर बैठ कर तस्वीरें बनाने लगे हैं जिनसे दरिया का किनारा, ताड़ के पेड़, लकड़ी के पुल, पूनों का चाँद या उगता हुआ सूरज - ये चीजें बहुतायत से पाई जाती हैं। ये तस्वीरें आठ आने से आठ रुपए तक बिकती हैं और चूँकि प्रोफेसर साहब के हाथों में हुनर है इसीलिए उन्हें पेट पालने के लिए किसी का मोहताज नहीं होना पड़ता है। हमारे नगर में ये चित्र बहुत जनप्रिय हो चले हैं और तंबोलियों की दूकानों तक पर लंबे-लंबे ढाँचों में मढ़े हुए पाए जा सकते हैं।

अत: स्वाभाविक है कि इतने सीनियर और जनप्रिय कलाकार होने के कारण प्रोफेसर पन्नालाल कला के समीक्षक भी हो जाएँ। इसीलिए जब कभी वे मेरे पास आ जाते हैं तो आधुनिक चित्रकारों की थोड़ी-बहुत आलोचना भी सुना जाते हैं और अपनी अवस्था की ओर संकेत करके कह जाते हैं कि गुन ना हिरान्यो बल्कि गुन गाहक ही हिरान्यो है।

कल आते ही उन्होंने मुझसे पूछा, 'अजी, यह जामिनीराय कौन है? इंपीरियल कंपनी में एक राय राय करके आर्टिस्ट रहा करता था, वही तो नहीं है?'

मैंने आदर से कहा, 'नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। जामिनीराय तो बंगाली हैं।'

वे बोले, 'तो बंगाली तो वह भी था। हो सकता है कि उसी राय के यह भी कोई हों।'

मुझे जामिनीराय का इंपीरियल कंपनी के आर्टिस्ट से कोई संबंध रखना अच्छा न लगा। अत: मैंने बिलकुल निषेधात्मक मुद्रा में सिर हिला कर कहा, 'नहीं, जामिनीराय उसके कोई नहीं हैं।'

प्रोफेसर पन्नालाल मेरे निकट आ कर बैठे गए और बोले, 'अरे भाई, दिल्ली गया था। तस्वीरों की नुमाइश जब देखी तो चारों तरफ जामिनीराय ही जामिनीराय नजर आए। पर तस्वीरें ऐसी थीं कि हम तो नजर नीची करके भाग निकले। हम तो, साहब, ठहरे आर्टिस्ट आदमी, भद्दी तस्वीरें एक बार निगाह में चढ़ गईं तो हाथ से वही उतर कर कागज पर आएँगी।"

मैंनें आश्चर्य से पूछा, 'इतनी भद्दी थीं।' मेरी आवाज कुछ और चढ़ी, 'भद्दी?'

'भाई साहब, भद्दी या भली तो तब कहें जब वे असल तस्वीरें हों।'

मैंने उनकी बात काट कर शास्त्रार्थ वाले लहजे में कहा, 'प्रोफेसर साहब, इंपीरियलवाले की बात छोड़िए। मुझसे तो इन

जामिनीराय की बात कीजिए। आपको इनकी चित्रकला में कौन-सी कमी मालूम पड़ी?'

वे बोले, 'लो भाई, मैं कमी क्यों बताने लगा? सब अपने हाथ के हुनर पर जीते हैं। पर जामिनीराय जब तस्वीर बनाएँ तब तो कमी का जिक्र हो। वे तस्वीरें हैं कहाँ? गाँव की औरतें जैसे दरवाजे पर हाथी, घोड़े या सिपाही बना देती हैं, वैसे बेढंगे नक्शे-से बने थे। अब उन्हीं को तस्वीरें कहिए तो मेरी तस्वीरों को क्या कहिएगा?'

मैंने समझाते हुए कहा, 'प्रोफेसर साहब, जामिनीराय ने सचमुच लोकजीवन से प्रेरणा पाई है और...।'

पर अब तक वे आगे निकल चुके थे। कहते रहे, 'अरे साहब, यह लोकजीवन भी कोई आर्टिस्ट है। वही महाबली कंपनी वाले हरजीवन का भाई होगा। हरजीवन को ही क्या आता था?'

ऐसी बात सुनकर स्वाभाविक था कि मैं चुप हो जाता। अत: विजय के संतोष में पराजित को अपनी सदाशयता से प्रभावित करने वाली, नर्म आवाज में वे बोले, 'देखिए, बहस हरजीवन या लोकजीवन पर नहीं, जामिनीराय पर है। उनकी एक तस्वीर याद है "काला घोड़ा"। अब क्या बताऊँ उसके एक ही आँख थी और वह भी आँवले-सी गोल-गोल, मुगदर-नुमा गावदुम पाँव थे, जोधपुरी साफे की कलंगी-सी दुम थी और गधे के से कान थे। जीन की जगहा पीठ पर दरी बिछी हुई थी और रकाब की जगह एक तरफ घंटी-सी लटक रही थी। अब लीजिए साहब, न रकाब, न जीन, न लगाम और काला घोड़ा सवारी के लिए हाजिर है।'

मैंने अपना दिमागी पैंतरा बदलते हुए कहा, 'और साहब, आपने ये सब याद भी खूब कर रक्खा है, नहीं तो खयाल रहता है काले घोड़े की घंटी का?।'

वे प्रोत्साहित हो गए और सरपट बोलने लगे, 'यहीं नहीं, मैंने तो जामिनीराय की और भी तस्वीरें देख लीं। कहीं चंद लड़कियों के चेहरे बने थे और कह दिया गया कि पाँच बहनें हैं; सबके एक-से चेहरे, न जाने किस कमबख्त की लड़कियाँ थीं। अब अपने मुँह से क्या कहा जाए! हमने भी तीन औरतों की आमदकद तस्वीरें बनाई थीं। एक पर्दे की बात कर रहा हूँ। पर्दा सामने आते ही एक-तिहाई हाजरीन बेहोश हो जाते थे, एक-तिहाई सिर धुनते और आहें भरते थे, एक-तिहाई गजलें पढ़ने लगते थे। यहाँ इन बहनों का यह हाल था कि देख लीजिए तो सारी दुनिया में बस बहनें-ही-बहनें नजर आने लगेंगी। भई, मैं तो बाज आया ऐसे जामिनीराय से!'

मैंने विरोध न करते हुए, पर जामिनीराय को बचाते हुए कहा, 'और तस्वीरों के क्या हाल थे? कलकत्ते से तो और भी चित्र आए होंगे।'

'अब और की न पूछिए,' प्रोफेसर पन्नालाल नाक सिकोड़ कर बोले, 'वक्त की बात है। चलती का नाम गाड़ी है। जब मढ़ते बनती है तो बजती भी ठनाके से है।' कुछ देर शांत रह कर वे फिर अकस्मात कहने लगे, 'कोई अवनींद्रनाथ ठाकुर थे। उनके साथ नंदलाल, शारदा वकील, हाल्दार, मजूमदार न जाने कितने लोगों की तस्वीरें एक तरफ दीवाल घेरे थीं। वहाँ भी वही हालत! हमने तस्वीरें देखी और नजर नीची कर ली।'

मैंने पूछा, 'उनमें भी कोई खराबी थी?'

कहने लगे, 'जब सारा जहान उन तस्वीरों को लासानी मानता है तो मैं कैसे खराब बता सकता हूँ? पर बालिश्त-भर के चेहरे में डेढ़ बालिश्त लंबी ऊँगलियाँ, माफ कीजिएगा भाईजान, ऐसे इनसान इधर के इलाके में तो होते नहीं है' आधे मिनट तक उन्होंने सारगर्भित शांति-सी दिखाई और फिर बगटुट छूट चले, 'और तस्वीरों के नाम में वह फरेब है कि किसे क्या कहें? नंदनलाल साहब की एक तस्वीर है 'वसंत'। अब पूछिए मुझसे कि वसंत किसे कहते हैं। वंसत उसे कहते हैं जिसमें पेड़-पौधे फूलों से लद जाएँ, हवा अठखेलियाँ करती हुई बहे, कोयल बोले, भौंरे गुनगुनाएँ और बिजहिनें बागों में घूम-घूम कर कामदेव को कोसें। तो, यह तो हुआ वंसत, और पूछिए नंदनलाल साहब से कि उन्हें भी कुछ खबर है वसंत की। इसी तस्वीर में कुल तीन अदद पेड़ नजर आते हैं। वीराना-सा है। पेड़ों पर पत्तियाँ लगी हैं या फूल, कहना आसान नहीं और दो आदमी आगे-आगे भाग से रहे हैं और दो आदमी हाथ में चिकारा लिए पीछा कर रहे हैं। इन पीछा करने वालों में गालिबन एक औरत भी है और वह बच्चा लिए है। यानी वसंत में बच्चा भी शामिल हो गया। अब लीजिए साहब हो गया वसंत। इसी में हवा की अठखेलियाँ भी हैं, इसी में कोयल भी है और बिरहन का कोई जिक्र नहीं!'

प्रोफेसर पन्नालाल हँसने लगे। उनकी ऐसी निश्छल और द्वेषहीन हँसी सुन कर मैंने पूछा, 'तो कलकत्ता स्कूल आपको पसंद नहीं आया। बंबई वालों की भी तस्वीरें आपने देखी होंगी।'

सुनते ही वे तड़प उठे। बोले, 'उनका नाम न लीजिए साहब, मैं भी बंबई में रहा हूँ और जहाँ अपनी तस्वीरों का वह

दौर रहा वहीं के लोग आज यह दिन दिखाएँ। बस कुछ नहीं कह सकता। कहीं तीन काली-कलूटी औरतें बैठे हैं। कोई चावड़ा साहब हैं, उनकी तस्वीर है। एक औरत ओखली में कुछ कूट-सी रही है। बस जनाब हो गई तस्वीर। चंद मछलियाँ पड़ी हैं और एक पानी का बर्तन रक्खा है, सबकुछ धुँधला है। भाई साहब, यह भी एक तस्वीर है। अब यही सब रह गया है।'

मैंने कहा, 'एक "प्रोग्रेसिव ग्रुप" भी है।'

वे कुछ देर भौहों पर बल डाले सोचते रहे। फिर बोले, 'कह तो दिया जनाब कि कहीं सिर्फ तिकोने बनाइए, कहीं चौकोर नक्शे खींचिए, कहीं खर-पतवार उगा कर बीच में एक आँख बना दीजिए, कहीं सिर बनाइए तो पैर न बनाइए या पैर बनाइए तो सिर्फ पैर-ही-पैर बनाइए, इसी सबसे आपका मतलब है न? तो इसी भोलेपन की बदौलत आपके आर्टिस्ट विलायत का मुकाबला करने चले हैं?'

विलायत की बात सुन कर मैंने कहा, 'तो आप कहते क्या हैं? अमृत शेरगिल ने तो फ्रांस में अपनी तस्वीरों से वहाँ वालों का मुकाबला किया ही था।'

प्रोफेसर पन्नालाल ने कहा, 'मगर कहाँ साहब? मैंने उनकी भी तस्वीरें देखी हैं। जामिनीराय के मुकाबले में उनकी तीन बहनें देखिए तो मालूम होता है कि ये बहनें सचमुच ही कुछ हैं। पर बारीकी से देखिए तो पता चलना मुश्किल है कि कौन बड़ी है और कौन छोटी, कौन शादीशुदा है, कौन शादी करेगी। अब बताइए यह सब कोई कहने के लिए विलायत से तो आवेगा नहीं।' वे कहते गए, 'तस्वीर तो बोलती हुई होनी चाहिए। पर आजकल तो लफ्फाजी पर तस्वीरें चलती हैं। मैंने देखा की एक कमरे में मेज पर चाय के चंद प्याले टेढ़े-मेढ़े पड़े हैं। अब जनाब, एक साहब मुझे पढ़ाने लगे कि इसमें इनसान नहीं दिखाया गया, पर लगता है कि कमरे से अभी-अभी चाय पी कर लोग बाहर गए हैं। मैंने कहा, भाई जान, इसका क्या सबूत? मुझे लगता है कि नौकर बेसलीके से प्याले रख गया है और लोग उन्हीं में चाय पीने को आ रहे हैं। यह तो अपना-अपना खयाल है।'

मैंने कहा, 'तो सबूत होता भी तो क्या होता?'

वे बोले, 'क्यों फर्श पर जाते हुए पैरों के निशान क्यों नहीं दिए। भई, अक्ल की जरूरत तो सभी जगह पड़ती है!'

इतनी देर बाद मुझे लगा कि मेरे धैर्य की आखिरी बूँद सूख रही है। अत: मैंने कहा, 'प्रोफेसर साहब! असल बात यह है कि आजकल की चित्रकला के बारे में आप कुछ नहीं जानते। इसकी सुंदरता समझने के लिए आँख ही नहीं दिमाग भी चाहिए।'

पर वे शायद इसके लिए भी तैयार थे। इसलिए वे फिर मुस्करा दिए और बिना कहे ही कह गए कि मेरी पीढ़ी के लड़कों से वे इसी तमीज की उम्मीद करते हैं। कहने लगे, 'बस, बस, यही बात हम लोगों ने कभी नहीं कही। हम यहीं कच्चे पड़ते हैं। तुम लोगों का तो यह हल है कि गाना बहुत घुमा कर गाओगे। न पसंद आया, तो कह दोगे कि गाने वाला पक्का गवैया है और सुनने वाला गावदी है। बाद में अगर तुम अंग्रेजी ट्यून पर कोई सड़ियल तराना छेड़ बैठे और हमने नाक सिकोड़ी तो कह दोगे, पुराना जाहिल है, कुछ नहीं जानता। वही हाल आर्टिस्टी का है। तस्वीर सरासर आँख के सामने है, देखता हूँ तो देखने में अच्छी नहीं लगती, न कोई देवी है, न देवता है, न आदमी है, न औरत है, न नेचर का करिश्मा है, न इंसान की हिकमत है। टेढ़ी-मेढ़ी बेढंगी बातें हैं। मैं देख कर कहता हूँ कि यह तस्वीर दो कौड़ी की है और आप कह देते हैं कि मैं नासमझ हूँ। यानी सरासर तस्वीर देख रहा हूँ और आप कहते हैं कि मैं देखता नहीं हूँ।'

प्रोफेसर पन्नालाल शायद दूसरे की गवाही मान जाएँ इस आशा से मैंने कहा, 'और इन तस्वीरों पर जो इतना इनाम दिया जाता है ....?'

वे बोले, 'इनाम क्या? इनाम तो सरकार पक्के गाने पर भी देती है और फिल्मी गानों पर भी। पुराने ढंग की किताबों पर देती है और नए किस्म की पापुलर किताबों पर भी देती है। हर आर्ट की यही हालत है। सिर्फ तस्वीरों के मामले में घपला है। मैं तो यह कहने जा रहा हूँ कि जहाँ आप पाँच टेढ़ी-मेढ़ी आँखों के गोल दायरों पर इनाम देते हैं, वहीं मेरे राम-पंचायतन पर भी रहम खा लें। वे गोल दायरे तो आपके गोल कमरे में ही हैं, पर राम-पंचायतन तो जनता के घर-घर में है। जरा यह भी तो देखिए।'

वे कुछ देर उत्तेजित से बैठे रहे। फिर सहसा हँस कर जैसे कोई भूला हुआ फारमूला-सा याद करते हुए बोले, 'भाईजान, अब तो जनता-राज है और हम जनता के आर्टिस्ट हैं। आप हमारी समझ पर हँस कर खुद कौन-सी समझ

दिखा रहे हैं।?'

इस बार जिस अंदाज से उन्होंने झुक कर छाती पर हाथ रखा और अकड़ कर मूँछों से हँसी की फुलझड़ी बिखेरी, उससे मुझे इत्मीनान हो गया कि प्रोफेसर पन्नालाल की आर्टिस्टी निशात थियेटर कंपनी के पर्दों के ऊपर तक ही नहीं, कभी-कभी पर्दे के आगे स्टेज पर भी खिसक आती रही होगी। मैंने अपनी नासमझी मान ली और उनसे माफी माँगी। उन्होंने मुझे माफ कर दिया और मेरी वंश-परंपरागत विनम्रता की प्रशंसा की।

शीर्ष पर जाएँ